धर्म जीवन

वार्षिक चन्दा रु. 50/-

जुलाई-अगस्त 2010

* हम दूसरों पर कितने निर्भर हैं?

* भगवान देवात्मा का फरमान

* आत्मिक जीवन की रक्षा और उन्नति

* निरंतरता में निहित है जीवन का सौंदर्य

* श्रीमान् भाई अमर सिंह जी

* राजा ने अपने आलोचक को भेजा उपहार

हम दूसरों पर कितने निर्भर हैं?

कृतज्ञता का भाव हमारे लिए सच्चाई, भलाई, सौन्दर्य और आनन्द की दुनिया खोल देता है। यह भाव हमें इस सत्य का प्रदर्शन कराता है कि हम अपने आरम्भ, उन्नति और विकास के लिए दूसरों की सेवाओं पर निर्भर करते हैं। वह सच्चाई क्या है जो कृतज्ञता का भाव हमारे सामने स्पष्ट करता है? हमारा जन्म अपने अपने माता-पिता के कारण है। उन्हीं की सेवा, त्याग का परिणाम है।

क्या कभी हम अपने माता-पिता के त्याग, उनकी सेवाओं तथा उनके स्नेह की सुन्दरता को अनुभव करते हैं और उससे प्रभावित होते हैं? क्या दिन का कोई ऐसा क्षण होता है जब हम उन्हें याद करते हैं और उनके प्रति हार्दिक श्रद्धा भेंट करते हैं। जब हम अपने माता पिता की सेवाओं को भूल जाते हैं, मन से उनकी उपेक्षा कर देते हैं तो हमारे जीवन में एक सत्य का अभाव हो जाता है और इसका कारण यह है कि उनके प्रति कृतज्ञता का भाव हममें नहीं होता।

जैसे ही हम अपना दिन आरम्भ करते हैं, हम अपने नौकर से मिलते हैं जो हमारे लिए प्रात: काल की चाय का कप लेकर उपस्थित होता है। यदि वह हमें आदर देता है और मुस्कान के साथ मिलता है तो हमारा भी कर्तव्य है कि उसके इस सद्व्यवहार का प्रति उत्तर मुस्कान और धन्यवाद के साथ दें। हम जानते हैं कि यदि वह हमारे स्वाद की चाय बनाकर प्रात: काल न लाये, उसका व्यवहार भी चिड़चिड़ा और उदासीनता का हो तो वह हमारी मानसिक भावना को कितनी ठेस पहुँचा सकता है और हम पर उसका कितना बुरा प्रभाव पड़ सकता है। यदि हम अपने नौकर की अच्छी और प्रीतिकर सेवा को साधारण रूप में लें और उसकी अच्छी सेवा और सद्व्यवहार के लिए कोई प्रंशसात्मक शब्द धन्यावाद के रूप में न कहें तो उसका हृदय अवश्य दुख अनुभव करेगा। उसका सारा दिन हमने अपने उदासीन बर्ताव और अपेक्षावृत्ति के व्यवहार से उसकी सेवाओं के बदले कड़वा बना दिया।

जैसे ही हम अपने कार्य पर जाने के समय अपने वस्त्र बदलते हैं क्या उस समय अपने धोबी के प्रति हमारे अन्दर सराहना का भाव जागता है?

जब हम नाश्ता करने बैठते हैं तो क्या हम घर की उस महिला की सेवाओं के प्रति, जिसने हमारे लिए स्वादिष्ट भोजन तैयार करने का कष्ट किया है, सराहना महसूस करते हैं? उसने समय पर हमारे लिए सब कुछ किया है और अन्य कई हमारे कार्यों को साथ-साथ देखा है। जो कुछ उसने हमारे लिए किया है उसके लिए वह हमारी मुस्कान तथा धन्यवाद के शब्द की अधिकारी है। अगर इस प्रकार का व्यवहार दर्शाने में हम चूक जाते हैं तो बहुत बड़ी भूल करते हैं, और ऐसी

शेष पेज 9 पर

धर्म जीवन

खण्ड 23 अंक 7 – 8

जुलाई – अगस्त 2010

वार्षिक मूल्य 50 रुपये

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

भगवान देवात्मा का फरमान

(20 अप्रैल 28 के उपदेश के कुछ भाग)

अब मैं तुम्हरे सामने कुछ बातें बताना चाहता हूं, और यह चाहता हूं कि यह सच्चाईयां तुम्हें नज़र आ जावें।

पहली बात यह है कि इन्सान के अन्दर जो-जो नीच सुख अनुराग और नीच घृणाएं मौजूद होते हैं, वह उन तमाम बुराईयों और ख़राबियों की जड़ हैं कि जो उससे सरज़द होती रहती हैं। तुम्हारे सामने मेरे इन अलफ़ाज की असल तस्वीर खुलनी चाहिए। हमारा यह दावा है और नेचर के सच्चे वाक्यात इसका सबूत हैं कि इन्सान जो झूठ और बुराई के अमल करता है वह सब अपने नाना प्रकार के नीच सुख अनुरागों और घृणा भावों से परिचालित होकर करता है। नेचर की इस सच्चाई को कोई नहीं झुठला सकता।

इन्सानों की बेहतरी और भलाई का दारोमदार उनके उच्च या नीच भावों पर निर्भर करता है। जिस किसी के अन्दर जितने अधिक नीच भाव मौजूद होते हैं वह अपने आत्मा के विचार से उतना ही अधिक पतित होता है। जिस आत्मा में जिस कदर उच्च भाव मौजूद होते हैं, उसी कदर वह नेचर में एक बेहतर वजूद होता है।

इन्सान के मुख्तलिफ़ सुख अनुरागों में एक उसका अहं सुख अनुराग है।

अहं सुख अनुराग से क्या मुराद है? अपनी 'मैं' की ज़बरदस्त तरफ़दारी या पक्षपात को अहं अनुराग कहते हैं।

शुरू शुरू में जब बच्चा पैदा होता है, तो जब वह टट्टी पेशाब कर देता है तो नहीं जानता कि मैंने टट्टी या पेशाब कर दिया है। उस वक्त उसके अन्दर अपनी "मैं" का बोध नहीं होता।

लेकिन ज्यों-ज्यों वक्त गुज़रता है उसके अन्दर अपनी "मैं" का बोध जागना शुरू हो जाता है और वह इस प्रकार कहना और समझना शुरू कर देता है कि यह चीज़ मेरी है, उसने मुझे मारा है, आदि।

जिस इन्सान के अन्दर अंह अनुराग अधिक बढ़ता चला जाता है, उतना ही वह झूठ से भरता चला जाता है। अंह अनुरागी जन से जब यह

पूछो कि तुमने चीज़ चोरी करके खाई है, तो वह झूठ बोल देगा और कह देगा कि नहीं मैंने नहीं खाई, हालांकि वह अपने दिल में जानता है कि वह चीज़ उसने खाई है। उस चीज़ को उसके हाथों ने उठाया है, वह चीज़ उसके मुंह में गई हैं, लेकिन वह इस बात से इन्कार कर देता है। ऐसा वह क्यों करता है? वह इस प्रकार क्यों नहीं कहता कि मैंने चोरी की है। मैं कसूरवार हूं। मुझे सजा दी जावे। झूठ उसके अन्दर क्यों पैदा हो जाता है? उसकी वजह यह है कि वह यह हरगिज़ नहीं चाहता कि वह किसी के सामने अपराधी या दोषी नज़र आवे। वह चाहता है कि मैं किसी की नज़रों में बुरा न समझा जाऊं। मैं अपराधी होकर भी अपराधी न समझा जाऊं और न अपराधी नज़र आऊं।

अपनी बढ़ी हुई "मैं" का जो प्यार है, वही घमण्ड भाव कहलाता है। जहां कहीं इन्सान किसी की अपेक्षा अपने आपको झूठ मूठ बड़ा और बढ़िया मानता है, अपने आपको झूठ मूठ बड़ा या बढ़िया ज़ाहिर करता है या बड़ा और बढ़िया विश्वास करता है, तब उसकी ऐसी हालत घमंड की हालत कहलाती है।

इस सच्चाई से जो शख्स इन्कार करता हैं, वह पागल है। इससे आगे एक बात है, वह यह कि जब कोई इन्सान अपनी ख्वाहिश की तृप्ति के लिए किसी से कोई चीज़ उधार मांगता है, उससे कुछ कर्ज़ा मांगता है और वह जन उसकी इस ख्वाहिश को किसी वजह से पूरा नहीं करता या नहीं कर सकता, और उसको वह चीज़ उधार नहीं देता, या रुपया कर्ज नहीं दे सकता, तब देखो कि उस मांगने वाले जन के चेहरे का क्या हाल होता है। उसके दिल पर जाकर चोट लगती है। चूँकि वह सुख का अनुरागी है और सुख की तृप्ति न होने पर उसके अन्दर दुख पैदा होता है। इसलिए उस दुख की पैदायश के साथ उसके अन्दर नफ़रत भड़क उठती है और अगर वह कुछ और नहीं कर सकता तो अपने दिल में बुड़-बुड़ करने लगता है। किसी दूसरे के पास जाकर उस शख्स की निन्दा करता है जिसने उसकी ख्वाहिश को पूरा नहीं किया।

पूजनीय भगवान ने फरमाया-

घमंड और नीच घृणा के इलावा इन्सान के अन्दर जो एक और चीज़ खौफ़नाक रूप में आई है, उसका नाम स्वेछाचारिता है। स्वेच्छाचारी मनुष्य अपनी ही मर्ज़ी के मुताबिक चलता है। और उसके बरखिलाफ कुछ नहीं करना चाहता। यह चीज़ भी इन्सान में बचपन से ही आ जाती है। बच्चे को अगर कहो कि दो पैसे ले लो और उसके लड्डू लेकर खा लो तो वह भागा जाता है, लेकिन अगर उसकी मां उसको यह कहदे कि यह चीज़ तुम्हारे लिए नहीं है तो वह आफ़त पैदा कर देता है। बच्चे अपनी माता के लिए बचपन से ही अपनी स्वेच्छाचारिता के कारण बहुत दुखदाई साबित होने लग जाते हैं।

चौथी खौफनाक चीज़ जो अहं अनुरागी जन में पैदा हो जाती है, वह है स्वार्थ सुख अनुराग अर्थात सिर्फ और सिर्फ अपने ही एक या दूसरे किस्म के सुख के लिए जीना, किसी दूसरे के काम

आना न चाहना और दूसरों से ज़्यादह से ज़्यादह सेवा हासिल करने की ख्वाहिश रखना और उनसे ज़्यादह से ज़्यादह सेवा हासिल करना। अगर खुद किसी की सेवा करना तो उसी हद तक कि जिस हद तक उसे उससे किसी एक या दूसरे सुख के मिलने की उम्मीद है।

मनुष्य के अन्दर यह बातें पशुओं से आई हैं। हिन्दोस्तान के मनुष्यों में और उनके इलावा बाहर के मुलकों के मनुष्यों में भी आई हैं।

जिन मुल्कों के लोगों में इन नीच भावों का अधिकार अपेक्षाकृत कम होता है, वह इस लिहाज से उन मुल्कों के लोगों की अपेक्षा बेहतर होते हैं कि जिन में इन नीच भावों का अधिकार ज़्यादह होता है। नेचर का यह नियम है कि जिन लोगों में यह नीच सुख अनुराग जिस कदर ज़्यादह मिक़दार में पाए जावेंगे, उसी कदर वह घटिया और कमज़ोर पाए जाऐंगे, और जिन में यह नीच सुख अनुराग कम होंगे, वह उसी कदर बढ़िया और ताक़तवर मिलेंगे।

घमंडी, स्वार्थी, स्वेच्छाचारी और नीच घृणाकारी जनों का धर्म राज में प्रवेश नहीं हो सकता। कोई ग्रन्थ, कोई गुरू या कहलाने वाला ईश्वर या खुदा ऐसे शख्सों को आत्मिक पतन और विनाश से नहीं बचा सकता कि जिनके अन्दर उपरोक्त चारों प्रकार के भाव हद से ज्यादह बढ़ गए हों।

जहां घमंड है, वहां नेचर के किसी विषय के सम्बन्ध में इन्सान तहक़ीकात करना नहीं चाहता। उसे ऐसा करने में नेचर के अटल नियमानुसार कोई सुख नहीं मिलता। इसलिए वह अपने और औरों के सम्बन्ध में मिथ्या विश्वासों से भरा पड़ा रहता है और अपने आप और औरों के सम्बन्ध में असल हक़ीकत को जानने के लिए रोशनी हासिल करना नहीं चाहता।

घमंडी इन्सान देवात्मा को भी खराब बताता है, कि जिसने ऐसी किताबें लिखी हैं, जिन में किसी प्रकार सुख हासिल करना इन्सान की जिन्दगी का मकसद नहीं बतलाया।

सेवक सेविकाओं में भी जो जन अधिक घमंड अनुरागों के अधीन होते हैं, वह देवात्मा को अपना गुरू कह कर भी उसकी पुस्तकों का अध्ययन करना नहीं चाहते, और नहीं करते। उनको ऐसा करने में सुख नहीं मिलता। वह देवात्मा की रहनुमाई को कबूल करना नहीं चाहते। अगर वह कभी उनकी किसी पुस्तक का पाठ करते भी हैं तो उनको उसमें रस नहीं मिलता। देखना चाहिए कि उसकी तह में क्या बात है। रोशनी क्यों नहीं मिलती। रोशनी के पाने के अटल नियम हैं। वह जब तक पूरे न हों, तब तक रोशनी नहीं मिल सकती। किसी अस्तित्व को और खास कर देवात्मा को नीच घृणा करने से रोशनी नहीं मिलती। ऐसा होना नेचर के आत्मिक जगत के नियम के बरखिलाफ़ है।

न्यूटन की बाबत यह मशहूर है कि वह यह कहा करते थे कि मुझे जो इल्म (ज्ञान) है, वह ऐसा ही है, जैसे कोई शख़्स समुद्र के किनारे घोघे इक्ट्ठे कर रहा हो जब कि ज्ञान का समुद्र ठाठें मार रहा है। दीन जन ही ऐसा कह सकते हैं।

एक-एक घमंडी जन इस प्रकार कहता है कि हम देवात्मा की बात को सत्य नहीं मानते, चाहे देवात्मा की वह बात नेचर के सत्य और अटल नियमों और उसकी सत्य घटनाओं पर स्थापित ही क्यों न हों।

पूजनीय भगवान ने एक घटना का ज़िक्र किया और फरमाया कि हम एक दफा सड़क पर से गुज़र रहे थे। वहां एक पागलखाने के कुछ पागल काम कर रहे थे। उनमें से एक पागल ने हमें देखकर मुंह बनाया। पागलों के दारोगा ने उस पागल की इस किस्म की नाजायज़ हरकत को देखकर हमसे कहा कि आप इसको माफ करें, इसकी नाजायज़ हरकत का ख़्याल न करें। यह पागल है। यह सुन कर उस पागल ने दारोगा से कहा कि मैं पागल नहीं हूं तुम पागल हो। नेचर में यह एक सत्य है कि घमंडी शख्स खुद पथ भ्रष्ट और भ्रान्त होकर भी अपने आप को ठीक ठाक और बड़ा या बढ़िया समझता है, और दूसरों को गुमराह और भ्रान्त खयाल करता है।

पूज्नीय भगवान ने एक हाई कोर्ट की घटना सुनाते हुए फरमाया कि उस हाई कोर्ट के चीफ जस्टिस साहिब एक आंख से काने थे, और एक दूसरे जज साहिब एक टांग से लंगड़े थे। हाई कोर्ट में एक जाट का मुकदमा आया। मुकदमें का फैसला उस जाट के हक में नहीं हुआ। बल्कि उसके बरख़िलाफ़ हुआ। अपने बरख़िलाफ़ फैसले को सुन कर वह जाट बोल उठा, "जित्थे काणे ते लंगड़े बैठे होण ओथे माड़े दे हक च फैसला किवें हो सकदा ए?" घमंडी इन्सान की मर्ज़ी के खिलाफ जब कोई बात हो जाती है तो यह अमूमन किसी बड़े से बड़े की भी परवाह नहीं करता देखा जाता।

जिन के हक में फैसला हो गया था, उन्होंने ऐसा कुछ नहीं कहा। बज्कि जजों की तारीफ ही की होगी। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि वह घमंड से खाली थे। मनुष्य जहां कहीं किसी सच्चे नियम को मानता देखा जाता है वह इसलिए कि उस नियम को मानने से उसको सुख मिलता है। जहां कहीं किसी सच्चे नियम की पैरवी करने से उसे सुख की जगह दुख मिलता है, वहां वह उसकी पैरवी नहीं करना चाहता और नहीं करता।

"मैं" का अनुरागी इन्सान एक-एक मामले में हकीकत की तह तक नहीं जाना चाहता। उसके सब फैसले अपनी "मैं" को लेकर होते हैं। नेचर के सच्चे नियमों और वाक़यात की वह परवाह नहीं करता।

पूज़नीय भगवान ने फरमाया कि किसी विषय में हकीकत को देखने से आंखें बन्द न करो, वरना तबाह और बरबाद हो जाओगे, कि जैसे अब तक होते रहे हो।

यूरोप के मुल्कों में लोगों ने जब एक-एक विषय में अपनी खोज शुरू की है तो इस अभिप्राय के लिए अकसर वहां नाना सोसायटियां बन गई हैं और कितने ही लोग उनके उस काम में मददगार बन गए हैं। लेकिन यहां हमारे मुल्क में अगर कोई नई बात ज़ाहिर होती है तो चारों तरफ़ से लोग घूरना शुरू कर देते है। मुखालफ़त शुरू हो जाती है। मदद नहीं मिलती उल्टे सताने वाले पैदा हो जाते

हैं.....।

घमंडी और स्वेछाचारी जन आपस में मिलकर कभी किसी अच्छे काम को पूरा करने के लिए एक समूह या जत्था नहीं बना सकते। जहां "मैं", है, वहां गठन या जत्था कहां? गठन बनाने के लिए यह लाज़मी है कि उसके सब अंग किसी नियम या नियमों के आधीन हो कर चलें। जैसे शरीर के विविध अंग आत्मा के आधीन होकर काम करते हैं।

इंडिया में उसके निवासियों के आपस के घंमड, नीच घृणा, स्वार्थ और स्वेच्छाचारिता आदि नीच भावों की वजह से अब तक कोई कौम नहीं बन सकी है। यह भी अभी शक है कि आया कभी बनेगी भी या नहीं।

किसी गठन प्राप्त सोसयटी में उसके सब अंगों को हरकत में आने की ज़रूरत है, क्योंकि अगर सब अंग हरकत में न आवें तो नुकसान हो जाता है।

पूजनीय भगवान ने धागों की मिसाल देकर यह सच्चाई समझाने की कोशिश की कि एक अकेला धागा कमजोर होता है और वह थोड़ी सी ताकत के मुकाबले में टूट जाता हैं। लेकिन बहुत सारे धागों की मिलाकर अगर एक रस्से की शकल में वट लिया जावे तो वह आसानी से टूट नहीं सकता। <u>समाज में आपस के मेल से इस प्रकार ताकत पैदा होने की ज़रूरत है।</u>

जहां नीच घृणा मौजूद होती है, वहां न कोई कौम बन सकती है न कोई सोसाईटी। इंडिया में जात पात क्यों मौजूद है? इसलिए कि इण्डियन ने नीच घृणाकारी होकर यह सीखा ही नहीं कि किसी को सन्मान भी देना चाहिए। जब साईमन (Simon) बम्बई में आता है तो इण्डियन पहले से ही पुकारने लगे कि साईमन वापिस चले जाओ। (Simon Go back)।

अब जो इण्डियन लोगों में इस पहलु में कुछ - कुछ खयाल पैदा होने लगा है और कोपरेटिव सोसायटियां बनने लगी हैं, वह अंग्रेज़ों की बदौलत।

पूजनीय भगवान ने फरमाया कि हमने जो देव समाज बनाई है, उसका कुछ मक़सद है। देव समाज के सेवक आदि उसके मुख्तलिफ़ अंग हैं। और उसके मुख्तलिफ़ अंग होने की सूरत में उन सब के लिए देव समाज के मक़सद में सेवाकारी होना निहायत ज़रूरी है। लेकिन क्या देव समाज के सेवक उसके अंग होकर उसके कुछ काम आना चाहते हैं, और उसके कुछ काम करते हैं? अगर वह देव समाज के काम नहीं आते तो उसकी वजह यह है कि वह खुदगर्ज हैं और खुदग़र्ज़ रहना चाहते हैं। उनको अपने घमंड, नीच घृणा से काम है। तुम देखी कि इस विषय में तुम्हारा क्या हाल है और तुम देव समाज के लिए कितना काम करते हो?

स्वार्थ, स्वेच्छाचारिता, घमंड और नीच घृणा रख कर कोई इन्सान देवात्मा के साथ सम्बन्ध स्थापन नहीं कर सकता, न उनकी पूजा करने के काबिल हो सकता है।

गंगा राम ने चाहा कि उनके बेटे को सोलन में रहने के लिए जगह दी जावे, लेकिन असूल की बिना पर हम नही माने और जगह नहीं

दी। इस पर वह बिगड़ उठा और फट कर दूर हो गया।

देवात्मा के सम्बन्ध में इस हक़ीकत को जानने की अज़हद ज़रूरत है कि वह सच्चाई का साथ देने में किसी की परवा नहीं करते और इसीलिए उन्होनें गंगा राम या उनके बेटे की परवाह न की, और न किसी और की परवाह की है।

अहं अनुराग के, स्वार्थ, स्वेच्छाचारिता, घंमड और नीच घृणा, जो चार खौफ़नाक अंग हैं, वह सब के सब आत्मा के लिए पतनकारी हैं। यह महा नीच भावी जनों को, नाना परिवारों को और कौमों को जहां तक मुमकिन हो, तबाह करके छोड़ते हैं। जिस कदर इन महा नीच भावों का अधि कार रूहों के ऊपर से हटता है,उसी कदर उनकी भलाई का रास्ता खुलता है। और वह बेहतर बनने की क़ाबलियत हासिल करते हैं।

पूजनीय भगवान ने देव समाज के काम की अन्तिम जय के विषय में फ़रमाया कि देव समाज का काम नेचर के विकासकारी नियम के अनुसार है। देव समाज का काम फैलने और तरक्की करने के लिए है। अगर तुम्हारे ज़रिए यह न फैलेगा। इस मुल्क के ज़रिए न फैलेगा तो और मुल्कों के ज़रिए फैलेगा। ज़रूरत इस बात की है कि तुम लोग जहां तक सम्भव हो, ज्यादह से ज्यादह इस काम मे सेवाकारी बनो और इसकी जय के विश्वास से भरे रहो।

घंमड और नीच घृणा वगैरा नीच भावों के पंजे में फंसकर तबाह और बरबाद मत होवो। देव समाज में शामिल होकर बहुत से लोग इन महा नीच भावों के आधीन होकर तबाही और बरबादी के मार्ग पर चले गए हैं या देवसमाज से निकाले गए है, उनकी ज़िन्दगियों का ध्यान पूर्वक अध्ययन करो और देखो कि वह किस अवस्था में पहुंच गए हैं।

नेचर का यह नियम है कि जो बात तुम खुद नहीं जानते, और जिसको कोई और जन जानता है, और तुमको उसे बात के जानने की जरूरत है, तो तुम उसे जानने वाले जन की रहबरी में चलो। एक एक अन्धा आदमी आंखों वाले की रहबरी में चलता है। वह खुद भी कहता है कि मैं अन्धा हूं। मेरी मदद करो। हम जूता नहीं बना सकते, इस लिए मान लेते हैं, कि हम जूता नहीं बना सकते। इसी तरह और भी जो बातें हमें नहीं आती, हम मान लेते हैं, कि वह हमें नहीं आतीं। लेकिन घमंडी इन्सान किसी बात को न जानकर भी यह बतलाना चाहता हे कि वह उसकी जानता है। ज़रूरत इस बात की है, कि जो बात तुम नहीं जानते, मानों, कि मैं नहीं जानता। और जिस किसी से उसको सीखने की ज़रूरत है, उससे उस को सीखो। घमंड में भरे रहकर नुकसान मत उठाओ।

तुम देखो कि क्या तुम किसी की भलाई चाहते हो, अपनी, अपने घरवालों की, अपने देशवासियों की? या भलाई को नफ़रत करते हो? अगर तुम नेचर में किसी बजूद की भलाई नहीं चाहते और भलाई के काम से नफ़रत करते हो तो नेचर से तुम्हारा मिट जाना अनिवार्य है।

कर्मचारी पहले देव समाज की सेवा का काम करता था अब नहीं करता। अहं अनुराग ने उसको तबाह कर दिया। तुम जिस समाज की सेवा

करने के ख्वाहिशमन्द हो, और जिस की हानि के अहं अनुराग विषयक स्वार्थ, स्वेच्छाचारिता; घमंड और नीच घृणा, यह चार कारण मुख्य हैं, क्या यह तुम्हारा फ़र्ज नहीं है कि तुम इन चारों नीच भावों से खुद निकलो और दूसरों को इन से निकालने का संग्राम करो। देव समाज को मुख्तलिफ़ जनों के अहं अनुराग विषयक स्वार्थ, स्वेच्छा-चरिता, घमंड, नीच घृणा आदि नीच भावों से बहुत नुकसान पहुंचा है।

देव समाज बगैर बाध्यता के नहीं चल सकती।

तुम्हारा यह कितना उच्च अधिकार है कि तुम्हें देव समाज की सेवा करने का काम मिला हुआ है और तुम सेवा के इस काम पर अब तक कायम हो। तुम्हें अंह अनुराग विषयक चारों नीच अनुरागों से बचने की सख्त ज़रूरत है। सारी समाज में दल बद्धता के पैदा होने की ज़रूरत है। शहद की मक्खियों के जत्थे को देखो। एक जगह हाथ लगाओ तो सब हिल जाती हैं। यहां देवात्मा पर हमले होते हैं, मगर तुम लोग चुपचाप बैठे हो। वह मुसीबत ज़दा हैं, मगर तुम्हें उनकी कोई परवाह नहीं। तुम उनको अपना नहीं समझते। अगर अंह विषयक स्वार्थ आदि नीच भाव न जाएंगे, तो तुम्हारा क्या बनेगा? नेचर के नियम अनुसार तुम्हारा कुछ नहीं बन सकेगा, और इसीलिए इस विषय मैं अब तक हमारी मुराद पूरी नहीं हो सकी है।

पेज 2 का बाकी

खुशी से वंचित हो जाते हैं, जैसे घ्राण शक्ति से रहित व्यक्ति गुलाब के फूल की सुगन्ध लेने से वंचित हो जाता है।

जैसे ही हम अपने कार्यालय या संस्थान में जाते हैं तो हमें मालूम है कि हमें सन्तोष और सफलतापूर्वक अपना दिन व्यतीत करने के लिए लोगों का सहयोग चाहिए। कई बार हम अपने सहयोगियों और अपने अधीन कार्य करने वाले लोगों द्वारा किये गये कार्य में सहयोग और महत्त्व को भूल जाते हैं और उसके प्रति सजग नहीं रहते। जब संस्थान की कोई कड़ी टूट जाती है और दिन भर के कार्य में सफलता नहीं मिलती, अपितु निराश होना पड़ता है तो हम अपना धैर्य खो बैठते हैं और अपने सहयाग्यिों के प्रति बदले की भावना से कार्य करने लगते हैं। अपने कार्य से भले ही ऐसा न हो परन्तु विचारों से अवश्य ऐसा होता है। यदि हमारे अन्दर कृतज्ञता का भाव हो तो हम जितना कार्य के असफल होने पर धैर्य खो बैठते हैं और बदले की भावना से काम लेते हैं उतना ही हमें अपने सहयोगियों और अपने अधीनस्थ व्यक्तियों के कार्य की सफलता पर सराहना भी करनी चाहिए और उनका धन्यवाद भी करना चाहिए। यदि हम अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के कार्य की सराहना नहीं करते और उनका धन्यवाद नहीं करते तो हमें उनके असहयोग की स्थिति में बुरा मानने का अधि कार भी नहीं है।

आत्मिक जीवन की रक्षा और उन्नति के सम्बन्ध में नेचर के चार बड़े बड़े नियम

आत्मिक जीवन की रक्षा और उन्नति सम्बन्धी दो नियम है अर्थात् :-

1) स्वार्थ परता के जीवन से निकलकर एक या दूसरे सात्विक भाव से विशुद्ध परोपकार का काई काम करना और धीरे धीरे ऐसे किसी परोपकार का अनुरागी बन जाना।

2) अपने आत्मिक जीवन के सम्बन्ध में सत्य बोध लाभ करना और उस बोध की बिना पर देवात्मा के साथ चार प्रकार की सर्व्वोच्च सात्विक शक्तियों के द्वारा जीवन्त और उन्नतशील सम्बन्ध स्थापन करना। और ऐसी अवस्था लाभ करके देव प्रभाव प्राप्त करने और उनके अनुसार जीवन व्यतीत करने के अधिक से अधिक योग्य बनना।

अब इस से आगे तीसरा बड़ा नियम यह है, कि आत्मा की महा हानि करने वाले कुसंग से अपनी रक्षा करना।

कितने ही मनुष्य अपने भीतर एक या दूसरे प्रकार की बुरी प्रकृति रखने के अतिरिक्त एक वा दूसरे प्रकार की अच्छी प्रकृति भी रखते हैं। और बाज़ बुराइयों के सम्बन्ध में वह अपने भीतर कोई बड़ी लालसा रखने वाले भी नहीं होते परन्तु अपने आस पास के महा हानिकारक प्रभावों में रहते रहते वह अपने जीवन की अच्छी प्रकृति को घटाते और बुरी प्रकृति को बढ़ाते जाते हैं। इसलिए जो मनुष्य अपने जीवन का कुछ भी भला चाहते हों, उन्हें अपने आत्मा के ऊपर हानिकारक असर डालने वाली बुरी संगत से बहुत बचकर रहने की ज़रूरत है। ऐसी बुरी संगत चाहे निकट के सम्बन्धियों की हो और चाहे साधारण जनों की, आत्मिक जीवन के लिए महा हानिकारक प्रमाणित होती है।

कितने ही मनुष्य जो एक एक समय देव प्रभाव दायक संगत में पहुंचकर अपने जीवन में विविध प्रकार का उच्च परिवर्तन लाभ करते हैं, उसके बाद इस लिए पतित हो जाते हैं, कि उन्हें एक ओर देवप्रभाव दायक संगत प्राप्त नहीं रहती और दूसरी ओर उस के विरुद्ध उन्हें हानिकारक संगत से हर समय घिरा रहना पड़ता है।

साधारणत: मनुष्य ऐसी ही नीच प्रकृति रखने वाला है, कि उस की ऐसी प्रकृति को जो कोई जन आहार दे और ऐसा आहार देकर उसके आत्मा की महा हानि करे, वह उसे अपना शत्रु और हानिकारक सम्बन्धी अनुभव करने के स्थान में अपना शुभ चिन्तक अनुभव होता है। और इसलिए वह ऐसे मनुष्य की संगत से दूर दूर भागने की बजाय उसके निकट रहना चाहता है। किसी मनुष्य की ऐसी प्रकृति बहुत बड़ी हानिकारक प्रकृति होती है। इसलिए ऐसी हानिकारक प्रकृति का कोई जन जिस क़दर शीघ्र बोध पा सके, और उस से उद्धार पाने का सच्चा फ़िकर और संग्राम कर सके, उसी क़दर उसके लिए अच्छा है। ऐसी प्रकृति से बचने का बड़ा उपाय है, कि एक एक अधिकारी जन लगातार देव प्रभाव दायक संगत में रहकर ऐसी अवस्था में पहुंच जावे, कि उस कि लिए जीवन

नाशक प्रभाव डालने वाले क्या निकट के सम्बधियों और क्या दूर के जनों की संगत आकर्षणीय न रहे, किन्तु विकर्षणीय बन जाय। वह उन के पास दौड़ दौड़ कर जाने के स्थान में उनकी संगत से जहां तक सम्भव हो, दूर दूर रहने की कोशिश करना चाहे। जब किसी जन के भीतर हानिकारक प्रभावों और कुसंग के प्रति सच्ची घृणा होने की बजाय ऐसे कुसंग के लिए आकर्षण वर्तमान हो, अर्थात् वह दौड़ दौड़ कर ऐसी जनों के पास जाना चाहता हो, कि जिन में रहकर उसे अपने जीवन की कोई सुध बुध न रहती हो, तब वह अपना बहुत बड़ा शत्रु और अत्यन्त कृपा पात्र वजूद प्रमाणित होता है।

रात दिन करोड़ों बच्चे जो उमर के बढ़ने के साथ साथ विविध प्रकार के नीच भावों में बढ़ते चले जाते हैं, और धीरे धीरे बहुत बड़े मिथ्याचारी और अपहरणकारी बन जाते हैं, उस का एक बड़ा कारण यह होता है, कि वह जिस प्रकार के प्रभावों में रात दिन वास करते हैं, वह उन्हें ऐसी ही पतित मनुष्य बनाने की सामर्थ्य रखते हैं, वह उनकी नीच प्रकृति को तो आहार देते रहते हैं, परन्तु उनकी अच्छी प्रकृति को कोई आहार नहीं देते और नहीं दे सकते। इसलिए जो मनुष्य देव प्रभाव दायक सत्संग में रहने का महा सौभाग्य पाकर कुछ भी अपने आत्मिक कल्याण का आकांक्षी बन गया हो उसे जहां तक सम्भव हो, अधिक से अधिक देव प्रभाव दायक सत्संग में ही रहने का यत्न करना चाहिए, और जब कभी किसी पर सेवा के काम या किसी कर्तव्य को पूरा करने के लिए उसे नीच मनुष्यों से सम्बन्ध रखना वा उन से वास्ता डालना नितान्त आवश्यक हो, तब भी यदि सम्भव हो, तो वह अपने साथ किसी ऐसे साथी को रक्खे, कि जो उस तक देव प्रभाव पहुंचाने में सहायक बन सकता हो। इस के अतिरिक्त जहां तक सम्भव हो, जीवन नाशक प्रभाव देने वाले नीच अस्तित्वों के पास रहने से (वह चाहे दुनिया के विचार से कैसे ही निकट के सम्बन्धी कह-लाते हों) बहुत अधिक परहेज़ रखने की ज़रूरत है। यदि किसी जन को कोई उच्च संगत न मिले, तो भी उसके लिए नीच अस्तित्वों के साथ घी खिचड़ी होने की बजाय जहां तक हो सके, अकेले रहकर अपना काम काज करना अपेक्षाकृत अधिक हितकर होता है। फिर इसके भिन्न यदि किसी जन के लिए लाचारी की सूरत में नीच जनों के साथ रहकर कोई काम करना बहुत ज़रूरी हो, तो भी यह कोशिश होनी चाहिए, कि जहां तक सम्भव हो, वह शीघ्र उस काम को पूरा करके उन लोगों की बुरी संगत से अलग हो जावे। बुरी संगत एक एक मनुष्य की ऐसी होश मार देती है, कि फिर उसे यह भी पहचान नहीं रहती, कि उस बुरी संगत में रहकर मेरी क्या क्या हानि हो रही है। और उसकी यह भी अवस्था नहीं रहती, कि वह उस संगत से परे जाना चाहे, किन्तु वह साधारणत: ऐसी अवस्था में पहुंच जाता है, कि वह उस बुरी संगत में रहकर रोगी और दुर्बल बनता है और उस के साथ विविध प्रकार के अनुचित दुखों में पड़कर रोता भी रहता है, परन्तु उस बुरी संगत से परे जाने की अपने भीतर कोई सामर्थ्य या इच्छा नहीं रखता। हां, वह वहीं पड़ा रहकर मर जाना या नष्ट हो जाना चाहता है। कैसी महा शोचनीय अवस्था!!

नीच प्रभाव डालने वाले जनों के पास जब लाचारी की सूरत में किसी मनुष्य को जाना ही पड़े, तब उसका यह यत्न होना चाहिए, कि उन नीच

जनों के प्रभावों से परास्त होने की बजाय वह अपने जीवन के उच्च प्रभाव उन पर डाले, ऐसा संग्राम करने से एक ओर उन नीच आत्माओं का कुछ न कुछ भला हो सकता है, और दूसरी ओर इस संग्राम से उसके अपने जीवन की बहुत कुछ रक्षा होने की भी सम्भावना हो सकती है।

भली और बुरी संगत की एक बड़ी पहचान यह है, कि वह संगत हमारे भीतर के किन भावों को उत्तेजित करती और किन भावों का नाश करती है। जिस संगत से एक या दूसरी तरह के नीच भाव ही उत्तेजित होते हों और उच्च भाव मरते हों या उच्च प्रेरणायें नष्ट होती हों, वह संगत चाहे बाहर से कैसे ही प्यारे सम्बन्धियों को कहलाती हो, अवश्य महा हानिकारक होती है और इसलिए अपने आत्मा के शुभ आकांक्षी प्रत्येक जन को ऐसी संगत से बहुत डरते रहना चाहिए।

जिन लोगों को सच्चे मानों में बुरी संगत और अच्छी संगत के बुरे और अच्छे प्रभावों का यथेष्ट अनुभव हो जाता है, उन के दिल की हालत इस विषय में बिलकुल बदल जाती है। यथा विशेष सन्मान् के योग्य श्रद्धया डाक्टर प्रेम देवी जी जब अपनी तपेदिक की बीमारी मे बहुत नाज़ुक अवस्था में पहुंच चुकी थीं, तब उन के घर वालों ने यह प्रार्थना की, कि वह उनके पास घर में चली चलें, ताकि वह लोग ऐसी नाज़ुक हालत में उन के लिए विशेष रूप से सेवाकारी बन सकें। उसके उत्तर में श्रद्धया जी ने फ़माया, कि मैं आप के ऐसे भावों के लिए धन्यवाद देती हूं और यह भी अनुभव करती हूं, कि आप लोगों के पास रहने से हो सकता है, कि किसी अंग में मुझे शारीरिक विचार से कोई लाभ भी पहुंच जावे, परन्तु मैं केवल शरीर नहीं हूं किन्तु आत्मा हूं। और मेरे आत्मा को बचाने वाले विशेष उच्च प्रभाव आप लोगों के पास वर्तमान नहीं हैं, इसलिए मैं यहां की विशेष संगत को छोड़कर आप लागों में रहना किसी तरह हितकर नहीं समझती। हां, यह हो सकता है, कि यदि आप में से कोई जन मेरी सेवा का अधिक भाव रखते हों, तो वह यहां आकर मेरी सेवा कर सकते हैं। इस उत्तर के बाद जहां श्रद्धया जी अपने सांसारिक सम्बन्धियों के पास नहीं गई, वहां उन में से दो तीन जन श्रद्धया जी के पास पहुंच गए और वह कितने काल तक उनके लिए सेवाकारी होते रहे।

इसी तरह जब श्रीमान् स्वामी गोबिन्द राम जी अपनी शारीरिक ज़िन्दगी के आख़री समय मे रायपुर में विराजमान थे, तब उन्होंने ने ज़ोरदार तौर से यह इच्छा प्रगट की थी, कि उन्हें ऐसी हालत में किसी तरह उठाकर देव समाज धर्म्म विकालासय मोगे में पहुंचा दिया जावे। ऐसी आकांक्षा प्रकाश करने पर उनके कितने ही साथियों ने यह कहा, कि आप की शारीरिक अवस्था बहुत दुर्बल है और हम लोग यहां पर आप की हर तरह से सेवा करने को तैयार हैं, इसलिए आप इस हालत में मोगे जाने की तकलीफ़ न उठावें। सचमुच ऐसी हालत में रायपुर से मोगा पहुंचना कोई आसान बात न थी, परन्तु श्रीमान् स्वामी गोविन्द राम जी के दिल का प्रबल भाव उन्हें मजबूर करके मोगे में ले गया। मोगा पहुंचने पर यद्यपि शीघ्र ही उन के आत्मा ने स्थूल शरीर का त्याग कर दिया, परन्तु यह घटना इस बात को स्पष्ट रूप से प्रगट करती है, कि श्रीमान् स्वामी गोविन्द राम जी के भीतर नीच प्रभाव दायक संगत से बचे रहने और देव प्रभाव दायक संगत में वास करने की कितनी प्रबल आकांक्षा थी।

तब प्रिय पाठक गण! हम लोग अपने जीवनों पर विचार करके देखें, कि क्या हमारे भीतर नीच प्रभाव दायक संगत के लिए (वह चाहे कैसे ही निकट से निकट के सम्बन्धियों की क्यों न हो) उपरोक्त प्रकार की सच्ची घृणा उत्पन्न हो चुकी है या नहीं? अभी तक ऐसी घृणा पैदा नहीं हुई है या इस से भी बढ़कर हमारे भीतर उसके लिए कुछ आकर्षण वर्तमान है, तो निश्चय हमारी अवस्था बहुत ही कृपा पात्र है। ज़रूरत है, कि हम समय रहते रहते अपनी ऐसी अवस्था का सच्चा बोध पा सकें और जीवन की रक्षा कि निमित नीच प्रभाव दायक संगत के लिए सच्ची घृणा का बोध जाग्रित और उन्नत करने के सच्चे नियमों का पालन कर सकें।

निरंतरता में निहित है जीवन का सौंदर्य

हमारे जीवन की सफलता इसी बात में निहित है कि यह सतत् प्रवाहमान बना रहे। गति और प्रगति सुखी व सफल जीवन का प्राणतत्व है। हमें जीवन के इस प्रवाह को रोकना नहीं चाहिए। इस ब्रह्मांड की समस्त रचनाएं यथा सूर्य, चंद्र, ग्रह, नक्षत्र, नदियां, झरने सभी गति के ऊपर आधारित हैं। जिस दिन इनका प्रवाह रुक गया, मानो यह दुनिया थम जाएगी। हमें भी जीवन की इस गतिशीलता को समझते हुए मार्ग में आने वाले रोड़ों को देखकर अपने कदमों को रोकना नहीं चाहिए। जीवन में हालात हमेशा एक जैसे नहीं रहते। इसमें अनुकूल-प्रतिकूल दोनों प्रकार की परिस्थितियां आती है। जहां इस जीवन में सुख की मधुर वीणा है, वहीं दुख के कांटों की जंजीर भी है। फिर भी हमें पूरे साहस के साथ कांटो की जंजीर के दुख में भी सुख की वीणा का अनुभव करते हुए प्रगति-पथ पर निरंतर आगे बढ़ते रहना चाहिए।

किनारे से टकराती हुई लहरों को देखकर मुस्कराते हुए किनारें ने कहा-भगिनी, अभी तुम्हारा यहां आना हुआ और अभी क्षण वापस लौट रही हो? एक पल तो ठहर जाओ। लहर ने जवाब दिया - भ्राता, यदि हम अपनी अविरल गति को स्थगित कर लें तो हमारा अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। इससे तो यही अच्छा है कि हमारे आने-जाने का क्रम सुचारू रूप से चलता रहे। गति ही हमारा जीवन है और जड़ता मृत्यु। जब तक पानी अपनी अविरल गति से बहता रहता है, तब तक स्वच्छ सलिल के नाम से पुकारा जाता है। उसी पानी की गति में अवरोध आने पर उसमें बदबू आने लगती है।

सत्य धर्म बोध उत्सव के सम्बन्ध में ज़रूरी सूचना

हर वर्ष की तरह इस वर्ष भी सत्य धर्म बोध उत्सव, पूरे उत्साह और श्रद्धा के साथ चन्दीगढ़ 18-डी, धर्मशाला में 27 अगस्त 2010 से 29 अगस्त 2010 तक मनाया जा रहा है।

साथी सेवकों वा श्रद्धावानों की सेवा में बेनती है कि इस शुभ अवसर में अधिक से अधिक संख्या में पहुंच कर लाभ उठाएं।

प्रार्थी
बलदेव सिंह
मंत्री देव धर्म मिशन

श्रीमान् भाई अमर सिंह जी

1) देव समाज के अनोखे सेवक:-

विशेष श्रद्धा और सन्मान के योग्य श्रीमान् भाई अमर सिंह जी भगवान् देवात्मा की अनोखी देव समाज के अनोखे सेवक और कर्मचारी थे। ऐसा मालूम होता है, कि नेचर ने अपने निर्म्माण कार्य के द्वारा श्रीमान् भाई जी को मानो पूर्ण रूप से देव समाज की सेवा के लिए ही उत्पन्न किया था। देवसमाज के कार्य से बाहर और कोई वस्तु या पदार्थ या कार्य ऐसा नहीं, जो उन को जचता हो। अथवा जिस के लिए श्रीमान् भाई जी के विशेष हृदय में कोई थोड़ा सा भी स्थान-पाया जाता हो। प्राय: लम्बे काल तक वह भगवान् देवात्मा के कार्य के लिए पूर्ण रूप से निछावर होते रहे। भगवान् देवात्मा के अद्वितीय और महा कठिन कार्य के लिए साठ वर्ष का बहुत लम्बा काल सेवा में व्यतीत करना देव समाज के इतिहास में एक अति विचित्र घटना है। इस पृथिवी की अन्य समाजों वा सोसाईटियों के त्याग क्षेत्र में साठ वर्ष का इस क़दर लम्बा काल शायद ही किसी ने त्याग और वफ़ादारी के साथ व्यतीत किया हो। अब यदि हम अपनी कल्पना शक्ति को काम में लाकर श्रीमान् भाई जी के इस क़दर लम्बे काल के त्यागों का फोटो खैंच सके, तो हमें स्पष्ट प्रतीत होगा, कि श्रीमान भाई जी ने अपने व्रत में वफ़ादार रहने के निमित कौनसा त्याग और बहादुरी का हृदय स्पर्शीय दृश्य प्रदर्शन नहीं किया? देव समाज का कौनसा कार्य क्षेत्र है, जिस में उन्हों ने पहुंच कर काम नहीं किया, अथवा उस के कार्य में कन्धा नहीं लगाया। यदि वह धर्म प्रचार में लगाए गए, तो बहुत उच्च कोटि के प्रचारक प्रमाणित हुए। यदि देव समाज के मुक़दमों मे लड़ने के लिए लगाए गए तो अच्छे पाए के और निहायत ही जफ़ाकश और बहादुर वकील प्रमाणित हुए। बेशक उन्होंने वकालत का इम्तिहान पास नहीं किया, परन्तु मिसलों के तैयार करने मे वह बहुत बड़े मददगार साबत होते रहे हैं। अगर व्याख्यान देने में लगाए गए, तो जिस बहादुरी और सुन्दरता के साथ वह देव समाज की अनोखी धर्म शिक्षा को जनता के सामने पेश करते रहे हैं, देव समाज की अनोखी धर्म शिक्षा के वह लेखों के द्वारा इस क़दर सुन्दरता से पेश कर सकते थे, कि जिस को पढ़कर अधिकारी हृदय उन के सन्मुख झुकने के बिना नहीं रह सकते थे। सम्भवता 1804 ई० में पूजनीय भगवान् की तरफ़ से आज्ञा हुई थी, कि नाना जन देव समाज की विशेषता पर एक लेख लिखें। मैंने भी कई और जनों की तरह इस विषय पर लेख लिखा था। सब लेखों की तुलना में श्रीमान् भाई जी का लेख चुना गया और अच्छा समझा गया। जब देव समाज को एडीटर की ज़रूरत पड़ी, तब भी समाज की नज़र श्रीमान् भाई जी की तरफ़ गई। वह वर्षो तक एडीटर रहे हैं। सैकड़ों लेख उन्हों ने लिखे हैं। कई स्थूल देह त्यागी कर्मचारियों के जीवन चरित्र श्री भाई जी ने लिखे हैं। दान एकत्र करने के काम में श्री भाई जी ने गज़ब ही ढाया। अपने गाढ़ मित्र और साथी कर्मचारी विशेष सम्मान् के योग्य श्रीमान् भाई मोहन देव जी के साथ उन्हों ने वर्षो तक दान एकत्र करने का काम किया। उन के

बीमार होने और गुज़रने के बाद मुझे अपने साथ लेकर 16 वर्ष का लम्बा काल बम्बई में दान एकत्र किया है। जब देव समाज के प्रति विरोधियों की तरफ से विरोधिता का तूफ़ान पैदा किया गया, तब यह ग़ैर मामूली दिलेर और वफ़ादार सेवक शेर की न्याई खड़े होकर गरजते रहे। और क्या मजाल, कि अपनी जगह से एक इंच भी पीछे हटें। श्रीमान् भाई जी पीछे हटना तो जानते ही नहीं थे। हौसला छोड़ देना तो उन के स्वभाव में ही नहीं था। अंग्रेज़ी क़ौम के कई बहादुर सुपुत्रों की न्याई ज्यों विरोधिता को बढ़ता हुआ देखते हैं, त्यों ही उन का हौसला और जोश बढ़ता जाता। शुरू उमर में ही उन की धर्म पत्नी का देहान्त हो गया, उसके बाद उन्हों ने विवाह के बिखेड़ों मे पड़ना नहीं चाहा। क्योंकि वह हमेशा यही चाहते रहे, कि उनके जीवन का हर एक मिनट और उन की प्रत्येक शक्ति देव समाज और केवल देव समाज के मुख्य रखकर ही काम में आवे। ऐसा मालूम होता है, कि श्रीमान् भाई जी ने एक हिन्दु स्त्री की न्याई देव समाज के साथ विवाह सूत्र के द्वारा अपना सम्बन्ध स्थापन किया हुआ था। और एक पूर्ण सती स्त्री की तरह अपने आप को देवसमाज का ही समझा। इसलिए यदि हम यह कह दें, कि श्रीमान् भाई अमर सिंह जी देव समाज के अनोखे सेवक और कर्मचारी हैं, तो हमारा कहना हरफ़ बहरफ़ सच होगा, और हरफ़ बहरफ़ सच है।

2) <u>एक उच्च कोटी की हस्ती:</u> -

अपने कई सद्गुणों और धर्म भावों के विचार से श्रीमान् भाई अमर सिंह जी एक बहुत उच्च कोटि की हस्ती थे। श्रीमान् भाई जी देव समाज स्थापन होने से पहले भगवान् देवात्मा के श्री चरणों में आ चुके थे। और अपना जीवन उनके चरणों में भेंट कर चुके थे। जिस दिन देव समाज स्थापन हुई, उस स्मरणीय सभा में भी श्री भाई जी वर्तमान थे। उस समय देवसमाज बेसरोसामानी की हालत में थी। देव समाज के पास सिर ढकने के लिए भी कोई मकान नहीं था। पैसों के विचार से वह बहुत ग़रीब थी। सन् 1982 ई० मे जब कुछ कृतघ्न जनों ने देव समाज से बेवफ़ा बनकर एक बहुत बड़ी सभा में भगवान् देवात्मा के प्रति अश्रद्धा और घृणा फैलाने का काम किया, तब भी बहादुर श्री भाई जी उन कृतघ्नों के ख़िलाफ गुरू के साथी रहे। फिर भगवान् देवात्मा ने जब उन महा कृतघ्नों के झूठे इलज़ामों का जवाब देने के लिए देवाश्रम के हाल में सभा की, तब विरोधियों ने अपनी महा नीच प्रकृति का भेद खुलने के भय से सभा में विघ्न उत्पन्न करके उसे होने न दिया। उस समय यह डर था, कि यह दुष्ट जन भगवान् देवात्मा की पाक ज़ात पर अपने अपवित्र हाथों से हमला न कर दें। देव समाज के लिए वह बहुत ही नाज़ुक समय था। उस समय भी बहादुर श्री भाई जी ने अपने सत्य उपास्य गुरू के सेवक होकर जिस वफ़ादारी और दलेरी का परिचय दिया, यह उन की बहुत उच्च कोटी की हस्ती का एक साक्षात जीवन्त प्रमाण है। वह ज़माना ऐसा था, कि गिनती के जन भगवान् देवात्मा के सेवक थे। बाक़ी चारों ओर बिरोधिता की अग्नि फैली हुई थी। उस नाज़ुक काल में कोई माई का लाल ही भगवान देवात्मा का खुल्लम खुल्ला साथी हो सकता था। श्रीमान् भाई अमर सिंह जी उस ज़माने के लाल हैं।

फिर एक समय देव समाज के इतिहास में ऐसा आया, कि जब भगवान् देवात्मा और श्रीमान् भाई अमर सिंह जी के खिलाफ़ फ़ीरोज़पुर के एक सिक्ख वकील की तरफ़ से फ़ौजदारी और दीवानी मुक़दमात शुरू हुए। वह मुकदमात क्या थे, मानो देव समाज को पूर्णत: नष्ट करने के लिए चालें थीं, और वह वकील खुल्ला कचहरी में कहता था, कि देव धर्म मिशन को ग़ारत करना मेरे जीवन का लक्ष्य है। उस ज़माना में इन मुक़दमात के सिलसिले में 'जीवन प्रेस' को बेचना पड़ा, देवाश्रम को किराए पर देना पड़ा और पैसे पैसे के लिए देव समाज को बहुत बड़ी तंगी में से गुज़रना पड़ा। उस संकटमय समय में भी श्री भाई जी ने जिस आत्म त्याग और आत्म समर्पण का ग़ैर मामूली दृश्य दिखाया, वह एक उच्च कोटि की हस्ती ही दिखा सकती थी। एक तरफ़ देव समाज इस तंग दस्ती में से गुज़र रही थी, और दूसरी तरफ़ पैसों के सम्बन्ध में हर एक प्रकार के लालच से ऊपर होकर जिस दयानतदारी का ग़ैर मामूली दृष्टान्त श्री भाई जी ने दिखाया, वह स्मरणीय है। भगवान देवात्मा के हृदय पर श्री भाई जी के इस ग़ैर मामूली भाव ने इस क़दर गहरा असर किया, कि वह अपने पवित्र मुखार्बिन्द से कई अवसरों पर यह प्रकाश करते रहे, कि श्रीमान् भाई अमरसिंह जी दयानतदारी के विचार से पूर्ण विश्वास के पात्र हैं। इस पाप भरी दुनिया में दयानतदारी का ऐसा विचित्र दृश्य दिखाना इक बुलन्द पाया की हस्ती के लिए ही सम्भव था। इस के भिन्न कम से कम वेतन लेकर वह हमेशा यह कोशिश करते रहे हैं, कि जिस समय और जब भी समाज की ओर से कभी दान की अपील हो, तब वह सब से पहले दान देने के लिए तैयार हो जाते रहे हैं। पिछले वर्षों में जब यह अपील की गई, कि हर एक सेवक अपनी एक मास की आमदनी देव समाज को दान करेगा और हर एक कर्मचारी अपना एक मास का वेतन दान देगा तब श्री भाई जी सब से पहले दान करने के लिए तैयार हो जाते रहे।

कुछ सालों की बात है, कि मैं भी भाई जी के साथ था, उस समय शायद वह 14 या इससे भी कम माहवार लेते थे। कहा जाता है, कि एक सेवक ने उन को 24 रुपए पकड़ाए, जब श्री भाई जी ने रात को अपना हिसाब मिलाया, तब उस में वह 24 रुपए नहीं थे। उक्त सेवक ने कहा, मैंने आप को 24 दिए हैं। श्री भाई जी का विचार था, कि उन्हों ने नहीं दिए। श्री भाई जी का हिसाब भी बताता था, कि उन को रुपए नहीं मिले, फिर भी श्री भाई जी ने उन को चुपचाप 24 रु. दे दिए ओर अपने मासिक में से प्रति मास 2 रु. बराबर देते रहे। यह वह अवसर था, कि जब हम लोग दान के लिए गए हुए थे, और जब कि श्री भाई जी का कोई भी दोष नहीं था, तो भी शक का जुरमाना उन्हों ने अपने ऊपर ही रक्खा और शक का फ़ायदा दूसरे को ही दिया। श्री भाई जी की इस घटना ने मेरे दिल पर बहुत गहरा असर किया। वर्षो तक उन्हों ने मेरे साथ दान एकत्र किया और मैंने हैरानी से देखा है, कि वह कम से कम बोझा देव समाज पर डालते हैं, और दान के काम में अपने शरीर से अधिक से अधिक काम लेते रहे हैं। सच बोलने में तो वह ग़ैर मामूली दृष्टान्त दिखलाते हैं। किसी भी सूरत में झूठ बोलना उनको बहुत नागवार है। अगर अपने रिश्तेदारों के विरुद्ध भी सच्ची गवाही देनी हो,

तो दे देते हैं। इस साल सिन्ध में जो मुक़दमें लड़ने पड़े, उन में मैं भी भाई जी के साथ था। उन मुक़दमात के दौरान में श्री भाई जी ने अपने लगातार वर्तावों से अपने वकीलों पर अच्छी तरह यह सिक्का जमा दिया, कि हम अंश मात्र भी झूठ का सहारा नहीं लेंगे। इसलिए अपने जीवन से उन्हों ने देव समाज की महिमा को इस क़दर महान किया है, कि जिस का वर्णन नहीं हो सकता। इस लिए मैं उन को एक बहुत बड़ी उच्च कोटी की हस्ती अनुभव करता हूं।

3) अनथक काम करने वाले कर्म्मचारी: -

श्री भाई जी को मैंने अनथक काम करने वाले कर्मचारी देखा और अनुभव किया है। उन्होंने अपने शरीर से बहुत अधिक काम लिया है। एक बार का ज़िकर है, कि हम दोनों ही नौसारी दान के लिए पहुंचे, हमें पता लगा, कि हमारे मेहरबान जन अपनी ज़मीनों पर कहीं दूर स्थान में गए हुए हैं। हम दोनों ही स्टेशन पर आए और गाड़ी पर सवार होकर एक और स्टेशन पर पहुंचे, जहां से कुछ मील आगे पैदल जाना था। श्री भाई जी चल पड़े, मैं नहीं चाहता था, कि इतनी दूर पैदल जाया जाए, क्योंकि मेरे पांव किसी क़दर ज़खमी हो चुके थे। श्री भाई जी भी थके हुए थे, परन्तु जहां फ़र्ज पूरा करना होता है, उनकी थकावट भाग जाती है। वह चल पड़े और मुझे भी घसीटते गए। हम दोनों ही थककर और चूर चूर होकर उस दानी के पास पहुंचे। हमारी एक सी हालत का उन पर जादू का सा असर हुआ। उन्हों ने हमें अपना नियत चन्दा भी दिया, और शायद 200) उन्होंने और भी दिए, और अपनी बैल गाड़ी तैयार कराके हमें स्टेशन पर पहुंचाया। यह सच है, कि श्री भाई जी अधिक से अधिक दान एकत्र करना चाहते हैं, परन्तु यह नहीं, कि यदि दो घण्टे में दो सौ या चार सौ रुपये मिल जावें; तो बाक़ी दिन छुट्टी मनाते हैं। छुट्टी तो कोई माने ही नहीं रखती। बम्बई में साधारणत: शाम के सात बजे तक काम करते रहते थे, और मुझे बार बार शिक्षा देते थे, कि फल से अधिक कर्तव्य है, कमाई से अधिक फ़र्ज है। दिन जो हमें मिला है, वह इस लिए नहीं, कि हम थोड़े से समय में अच्छा फल देख कर बाकी का आराम करें। हमें पूरी दयानतदारी के साथ सारा दिन काम करना चाहिए और अधिक से अधिक फल उत्पन्न करने की भी कोशिश करनी चाहिए। हमें सब से अधिक खुशी इस में हासिल करनी चाहिए, कि हम ने अपने कर्तव्य को पालन किया है और हम ने सारा दिन सफल किया है। इसलिए किसी भी भाव से परिचालित होकर श्री भाई जी अपना कर्तव्य नहीं छोड़ते थे। अगस्त स० 1843 ई० से लेकर अब तक भी भाई जी के जीवन की अनेक घटनाएं उत्पन्न हो चुकी थी, जो यह बताती थी, कि वह अपने जीवन को सफल करने के लिए अनथक संग्राम करते रहे हैं। सोलन में उन पर दस्तों का हमला हुआ, उनकी हालत बहुत नाज़ुक हो गई। उन को लाहौर पहुंचाया गया और मैंने यह यक़ीनी समझा, कि अब श्री भाई जी बम्बई दान के लिए नहीं जा सकेंगे। परन्तु मेरी हैरानी की हद न रही, जब श्री भाई जी का पत्र मिला, कि मेरी सेहत का रुख़ बेहतरी की तरफ़ है, मैं बम्बई अवश्य चलूंगा। तारीख़ नियत हुई। मैं और श्रीमती सरस्वती देवी जी सोलन से चले, और श्रीमान् भाई जी और श्रीमान्

भक्त सिंह जी लाहौर से रवाना हुए, हम देहली में इकट्ठे हो गए। श्री भाई जी की सेहत में कोई ख़ास बेहतरी नही थी, परन्तु उनका चेहरा बताता था और उनके हृदय में यह भाव कौंदता था, कि मैं बम्बई पंहुच कर देव समाज की जितनी भी सेवा कर सकूंगा, उतना ही मेरे शरीर और आत्मा की सफलता है। बम्बई में हम कुशलपूर्व्वक पहुंच गए। वहां जाकर एक समय ऐसा आया, कि श्री भाई जी पर फिर दस्तों का बहुत बड़ा हमला हुआ, मैंने लाहौर में तार भेजा, कि श्री भाई जी की हालत बहुत नाजुक है, मुझे मदद की ज़रूरत है। एक हमदर्द डाक्टर को बुलाकर भी श्री भाई जी को दिखाया गया, उन की दवाई से श्री भाई जी कि सेहत में फिर बेहतरी का परिवर्तन शुरू हुआ, चार पांच दिन के बाद मुझे बड़ौदा और नौसरी जाना था। मेरा तो यह फ़ैसला ही था, कि वहां पर मैं अकेला जाऊंगा, परन्तु मेरी हैरानी की हद् न रही, कि यह श्री भाई जी ने कहा, कि मैं भी वहां चलूंगा। मैंने उन को हटाने की बहुत कोशिश की, परन्तु अपने इरादे में ग़ैर मामूली तौर से पक्के भगवान् देवात्मा के इस वफ़ादार और अनथक कर्मचारी ने एक न सुनी। सफ़र जैसा कुछ मुश्किल था, वह कौन नहीं जानता। परन्तु श्री भाई जी मेरे साथ चल पड़े और वहां के दौरे को पूरा करके अच्छी तरह वापिस लौटे। इसी प्रकार बहुत मुश्किल से बम्बई का दौरा पूरा करके हम लोग पंजाब में वापिस पंहुच गए। यहां पर आकर उन की सेहत एक समय में ऐसी नाजुक हो गई, कि उन को डाक्टर की सलाह से हस्पताल में दाख़िल करना पड़ा। कई दिन के इलाज और सेवा के बाद वह कुछ बेहतर होकर फिर मन्दिर में आ गए। ऐसी बीमारी और कमज़ोर हालत में आदमी स्वाभाविक यह चाहता है, कि शरीर को आराम मिले। परन्तु श्री भाई जी का बलवान आत्मा उन के शरीर को आराम करने नहीं देता। वह बहुत कमज़ोर थे, फिर भी देव समाज कौन्सल की मीटिंग में सभापति होकर काम कर रहे हैं। "सत्य देव सम्वाद" में लेख लिखवाते रहते थे। विगत समाजोत्सव के अवसर पर उन्हों ने एक सभा भी करवाई। इस प्रकार के ग़ैर मामूली भावों को श्री भाई जी के आत्मा में देखकर कइयों के हृदय उन के श्री चरणों में झुक जाते थे, और हमें यह प्रतीत होता था, कि भगवान् देवात्मा के बल को पाकर श्री भाई जी अनथक संग्राम करने वाले हैं, और जब तक नेचर उन के लिए असम्भव न कर दे, वह भगवान् देवात्मा के शुभ कार्य में अपना कन्धा लगाने में ही तृप्ति बोध करते थे। मैं तो कई बार यह अनुभव करता रहा, कि यदि देव समाज एक श्री भाई जी को ही पैदा कर देती, तो भी उस का ऋण परिशोध नहीं हो सकता था। देव समाज के इतिहास में भी भाई जी की हस्ती विशेष रूप से स्मरण की जावेगी, और हज़ारों और लाखों के दिलों में नई जान फूंक देगी।

4) <u>अपने जीवन के प्रोग्राम के लिए सच्चे रहने का महा प्रबल भाव:</u> -

मैंने श्री भाई जी के साथ सन् 1924 ई० से काम करना शुरू किया हैं। सिन्ध में जो देव समाज पर कई मुक़दमे जारी किए गए थे, उन में मुझे श्री भाई जी के साथ रहने का अधिकार प्राप्त रहा। सन् 1927 ई० में श्रीमान् मोहन देवजी सख़्त बीमार हो गए, मुझे हुक्म मिला,

कि मैं श्री भाई जी के साथ बम्बई जाऊं और वहां जाकर दान एकत्र करूं। इस से पहले मैं औरों के साथ मिलकर दान एकत्र करता था। पहली बार ही सन् 1927 ई० में मैंने श्री भाई जी के साथ मिलकर काम किया। सन् 1928 ई० में श्रीमान् मोहन देव जी बीमारी से निकल आए और वह श्री भाई जी के साथ बम्बई दान के लिए चले गए। मैंने श्रीमान् सोनपार जी को साथ लेकर दान एकत्र किया। स० 1929 ई० की जनवरी में श्रीमान जी परलोक सिधार गए। इस साल से लगातार मैं श्री भाई जी साथ दान एकत्र करने का काम करता रहा हूं। वह कृपा करके मुझे कराची में अपने साथ ले जाते रहे, और बम्बई में भी मैं उनके साथ जाता रहा। मैं उन के जीवन के प्रोग्राम को देखकर उन के प्रति श्रद्धा का भाव रखता था। परन्तु इस बीस वर्ष के लम्बे काल में श्री भाई जी ने अपने जीवन के प्रोग्राम को पूरा करने में कभी भी कमी नहीं की। वह चार बजे प्रात:काल उठते हैं और जो साधन विधि उन्हों ने अपने जीवन के लिए रक्खी हुई है, उस को उत्तम रूप से प्रति दिन पूरा करते हैं। वह कामना का साधन करते, विचार का साधन करते और उस के बाद देवस्तोत्र का गान करते। फिर एक दो भजन गाते हैं, फिर किसी न किसी पुस्तक का पाठ करते, फिर देव आरती का गान करते और जय ध्वनि करके अपना साधन समाप्त करते। यह उन का साधन घण्टों तक चलता है। वह अपना साधन विधि पूर्व्वक प्रति दिन करते रहे हैं। सख्त बीमारी के समय वह किसी और को बुलाकर साधन की विधि पूरी कराते। यदि खुद देव स्तोत्र नहीं गा सकते, तो किसी और को गाने में लगाते। पिछले साल बम्बई में वह सख्त बीमार हो गए, फिर भी अपना साधन नहीं छोड़ा, न साधन का प्रोग्राम छोड़ा। श्रीमान भक्त सिंह जी बाजे के साथ देव स्तोत्र गाते थे, दो तीन भजनों का गान करते थे और फिर देव आरती गाते थे। यह सब कुछ श्री भाई जी के हृदय की व्याकुलता उन से कराती थी। जब वह उठने बैठने के योग्य नहीं थे तब वह अपने साधन का प्रोग्राम दूसरों की मदद से पूरा करते रहते। अपने जीवन के इस प्रोग्राम मे जहां तक भी मुमकिन हो, उन्हों ने किसी विघ्न को पड़ने नहीं दिया। श्री भाई जी का शुभ कामना में ग़ैर मामूली विश्वास था। इसलिए जब भी हम समाज के काम के लिए कहीं बाहर जाते थे, तो श्री भाई जी ज़रूर शुभ कामना का साधन करके ही चलते थे। उच्च शक्तियों की सहायता पर उनका पूर्ण विश्वास था, इसलिए अपने हरएक मुश्किल काम में वह उच्च शक्तियों से सहाय प्रार्थना करके तसल्ली पाते रहे हैं। जब हमें किसी मुश्किल काम पर बाहर जाना होता था, तब मुझे यक़ीन होता था, कि श्री भाई सहाय प्रार्थना करके ही चलेंगे। वह कमाल दर्जे के दीन थे, एक एक बार सहाय प्रार्थना के समय जिस क़दर अपनी तुच्छता को देखते, और जिस सरलता से फूट पड़ते, वह दृश्य मुझे कभी भी भूल नही सकता। जिस प्रकार एक एक बच्चा तर आंखों के साथ अपनी नन्हीं नन्हीं बाहें अपनी मां की तरफ़ फैला देता है, और यह अनुभव करता है, कि माता की गोद मेरे जिए रक्षाकारी गोद है, ठीक उसी प्रकार वह भगवान् देवात्मा और नेचर की अन्य सहायकारी शक्तियों से अपनी तर आंखों के साथ सहायता मांगते। और उन का यह

पूर्ण विश्वास था, कि मुझे यह सहायता अवश्य मिलेगी। और ऐसी अनेक घटनाएं उत्पन्न हो जाती रही हैं, कि जिन की हमें पहले कोई उम्मेद नहीं होती थी। और जिन घटनाओं के कारण हमें अपने काम में बहुत बड़ी सफलता प्राप्त होती रहीं है। श्रीमान् भाई जी यह पूर्ण बोध रखते हैं, कि नेचर का निर्म्माण कार्य सत्य और सार है, और उस के साथ अधिक से अधिक मेल रखना सलामती और उन्नति की दुनिया में पांव रखना हैं और उन का यह भी विश्वास था, कि

"सच्चे गुरू का बालका, मरे न मारा जाय"

पी०वी० कनल
(सिन्ध के पहले M.A.L.L.B,
की नज़र से)

राजा ने अपने आलोचक को भेजा उपहार

किसी समय बुखारा नगर में एक उदार राजा का शासन था। वह प्रजा का हर तरीके से ख्याल रखता और दिन-रात लोकोपकारी कार्यों में लगा रहता। लोग भी उसे जी-जान से चाहते और बहुत आदर करते थे। राजा के हर आदेश या आग्रह को प्रजा सिर-आखों पर लेती, किंतु उस राजा में एक व्यक्ति ऐसा भी था, जो दिन-रात राजा को कोसा करता। वह अत्यंय दरिद्र था, किंतु अपनी दरिद्रता मिटाने के लिए कुछ काम करना उसे घोर अरुचिकर प्रतीत होता। उसकी जुबान राजा की निंदा में विष वमन करने में निरंतर रत रहती थी। राजा यह सब जानकर भी शांत रहता, लेकिन एक दिन उसने इस पर विशेष रूप से विचार किया। फलस्वरूप एक रात्रि उस दरिद्र के द्वार पर राजा का एक सेवक उपस्थित हुआ। उसने कहा, राजा ने आपके लिए यह एक आटे की बोरी, एक साबुन की थैली और एक खांड की पुड़िया उपहार स्वरूप भेजी है, क्योंकि आप उन्हें बहुत याद करते है। वह व्यक्ति गर्व से फूल उठा और पड़ोस में रहने वाले मंदिर के पुजारी से बोला, राजा भी मेरी सद्भावनाएं पाने के इच्छुक हैं। तथी तो मेरा आदर करते हुए ये उपहार भेजे है। पुजारी ने मुस्कराकर कहा राजा ने तुम्हें इशारे में कुछ समझाया है। आटा तुम्हारे खाली पेट के लिए है, साबुन तुम्हारे दुर्गंधयुक्त शरीर की सफाई के लिए और खांड तुम्हारी कड़वी जुबान को मधुर बनाने के लिए। उस दिन के बाद से वह व्यक्ति सुधर गया। वस्तुत: दुष्टता का दमन विवेकपूर्ण सज्जनता से ही संभव है। दुष्ट पर क्रोध करने से वह दुष्टता पर उपर आता है, किंतु सौहार्दपूर्ण व्यवहार उसे स्वयं ही सुधरने के लिए विवश कर देता है।

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए, (लाईफ़ वर्कर) मंत्री-देव-धर्म-मिशन, प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक "धर्म जीवन" ने ***Surya Laser Den, Chandigarh*** *से छपवाकर म. नं. 3154, सैक्टर 21-डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।*

Book Posts